महाकवि कालिदास के रघुवंश में शृंगारानुशीलन

*** प्रो0 बृजेश कुमार शुक्ल**

महाकवि कालिदास संस्कृत–वाड्मय जगत् में रसेश्वर की संज्ञा से विभूषित होकर अपनी उत्कृष्ट रस–व्यंजना से किस सहृदय के हृदय को आप्लावित नहीं करते?आनन्दवर्धन जैसे काव्यशास्त्रियों की दृष्टि में यदि पाँच–छः कवियों की गणना की जाय तो कवि–परम्परावादी इस संसार में कालिदास का नाम प्रथम ही होगा[1]।

कालिदास ध्वनि अथवा व्यंजना शक्ति पर अपना पूर्ण अधिकार रखते हैं अतः वे उत्तम रस–ध्वनि के पोषण कवि हुए। चमत्कार तथा पाण्डित्य प्रदर्शन का अभाव ही कालिदास को रस–परिपाक कराने में सहायक हुआ है अन्यथा वे माघादि कवियों की भाँति केवल पाण्डित्य प्रदर्शक ही रह जाते। भाषा का सारल्य और भाव सहजता ही कविता – कामिनी का विलास है जो कालिदास की कृतियों में उभर कर प्रस्फुटित हुई है। चाहे सहृदय 'रघुवंशम्' का अवलोकन करें अथवा 'मेघदूतम् और कुमारसम्भवम्' के अन्तः करण में प्रविष्ट होकर देखें, सर्वत्र रस का परम प्रस्फुटन अनुभूत किया जाता है।

सृष्टि का मूल काम है। इसी से जगत् प्रादुर्भूत होता है। अतएव काम या रति संसार की प्रथम आवश्यकता है कदाचित् इसीलिए रति स्थायी भाव वाला शृंगार रस रसराज की कोटि में परिणित किया जाता है। शृंगार परम आह्लादोत्पादक रस है। साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने इस सन्दर्भ में लिखा है कि 'श्रृंग' कामदेव का उद्भेद है और उसके आगमन का जो हेतु हो उसे शृंगार कहा जाता है–

श्रृंग हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः।
उत्तमप्रकृतिप्रायो रसः शृंगार ईष्यते।।[2]

---

* निदेशक, अभिनवगुप्त संस्थान एवं पुर्व अध्यक्ष संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ, लखनऊ

इस प्रकार स्त्री–पुरुष का समागम, वसन्तादि ऋतुओं में उपलब्ध माल्य आदि का सेवन, सुख और इष्टि की पूर्ति श्रृंगार के नाम से अभिहित की जा सकती है।[3] विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'' इस भरतमुनि के वचनानुसार रस, विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से निष्पन्न होता है। जहाँ विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों के द्वारा रति नामक स्थायी भाव पुष्ट होता है, वहीं श्रृंगार रस निष्पन्न होता है। आचार्यो ने श्रृंगार रस के दो प्रकार बतलाये है – प्रथम सम्भोग श्रृंगार तथा दूसरा विप्रलम्भ श्रृंगार। नायक – नायिका का मिलन सम्भोग तथा उन दोनों का विरह विप्रलम्भ श्रृंगार कहा जाता है। विप्रलम्भ श्रृंगार के प्रवास, शाप आदि पाँच भेद किये गये है।[4] कालिदास श्रृंगार के दोनो भेदों में अपनी समान गति रखते हैं। 'मेघदूतम्' विप्रलम्भ श्रृंगार का खण्ड काव्य है तो 'कुमारसम्भवम्' संयोग श्रृंगार के वर्णन को प्रस्फुटित करता है। महाकवि कालिदास के नाटकों में सम्भोग तथा विप्रलम्भ श्रृंगार दोनों के सर्वांगीण दर्शन होते है। इस प्रकार कविगुरु कालिदास की वाणी रसराज का प्रवाह कराती हुई परिश्रान्त नहीं होती है।

महाकवि कालिदास का 'रघुवंश महाकाव्य' एक उत्कृष्ट महाकाव्य है। इस महाकाव्य मे प्रायः सभी रसों का उत्तम परिपाक हुआ है। रघुवंश महाकाव्य में इन्दुमती स्वयंवर वर्णन तथा अग्निवर्ण राजा के वर्णन प्रसंग में श्रृंगार रस की लहरी देखने को प्राप्त होती है। प्रायः इस महाकाव्य में सम्भोग श्रृंगार का ही वर्णन प्राप्त होता है कहीं–कहीं अवश्य वियोग का दृश्य दिखलाया गया है। कवि ने रघुवंश के प्रभावशाली राजाओं के वर्णन में श्रृंगार का या तो प्रयोग नहीं किया है अथवा मर्यादित श्रृंगार का प्रयोग करके अपनी शिष्टता का परिचय दिया है। यद्यपि रघुवंश महाकाव्य लिखते समय कवि का मन सम्भोग श्रृंगार मे अधिक रमा है। सम्भोग श्रृंगार के दो रूप इस महाकाव्य में दृष्टिगत होते है –

1. मर्यादित सम्भोग श्रृंगार
2. अमर्यादित सम्भोग श्रृंगार।

इन दोनो रूपों का वर्णन रघुवंश मे अधोलिखित रूपेण किया गया है –

मर्यादित सम्भोग शृंगार

महाकवि कालिदास ने प्रायः मर्यादित शृंगार रस का ही काव्यों मे प्रयोग किया है। 'रघुवंशम्' में कुछ स्थलों को छोड़कर सर्वत्र मर्यादित सम्भोग शृंगार का रस स्वाद किया जा सकता है। राजा दिलीप मिट्टी की सुगन्धि से युक्त सुदक्षिणा के मुख को एकान्त में सूँघकर तृप्त न हो सके, इस भाव को कवि ने इस श्लोक मे अभिव्यक्त किया है –

तदाननं मृत्सुरभि क्षितीश्वरो रहस्युपाघ्राय न तृप्तिमाययौ।
करीवसिक्तं पृषतैः पयोमुचां भाुचिव्यपाये वनराजिपल्वलम्।।[5]

कवि ने इन्दुमती के स्वयंवर वर्णन प्रसंग में राजाओं की शृंगारिक चेष्टाओं का वर्णन किया है, जिसमें विलक्षण ध्वनि के दर्शन होते हैं।

इस प्रकार शृंगार चेष्टाओं मे इन्दुमती आलम्बन विभाव तथा उसकी सुन्दरता उद्दीपन विभाव है। राजाओं की उक्त चेष्टाएँ अनुभाव, ईर्ष्या, औत्सुक्य व्यभिचारीभाव हैं। यहाँ रति केवल नायक में ही प्रादुर्भूत हुई तथा नायिका में रति का अभाव है अतः पूर्ण शृंगार–रस निष्पन्न नहीं हुआ है। "पूर्वरक्ता भवेन्नारी पुमान् पश्चात्तदिंगि़तैः" के अनुसार यहाँ पूर्वानुराग नायक में दिखलाया गया है। जो अनौचित्य दोष से दूषित है "तदाभासा अनौचित्य प्रवर्तिताः"[6] के अनुसार यहाँ शृंगाराभास ही स्वीकार किया जा सकता है।

जलकेलि सम्भोग शृंगार का एक अंग है। सुनन्दा, इन्दुमती से शूरसेन देश के राजा सुषेण की जलकेलि का वर्णन करती हुई कहती है कि यह राजा जब अपनी प्रियाओं के साथ मथुरा में यमुना के जल में केलि करता है तो प्रियाओं के स्तन से विमुक्त श्वेत चन्दन के धुलने से यमुना गंगा की तरंगों में मिश्रित दृष्टिगोचर होती है।[7] इन्दुमती का अजविषयक अनुराग अनिर्वचनीय था क्योंकि इन्दुमती के रोमांच से अज विषयक अनुराग बिना कहे ही अभिव्यक्त हो गया।[8] सप्तम् सर्ग में इन्दुमती तथा अज को देखने वाली स्त्रियों की विभिन्न चेष्टाओं का वर्णन किया गया है,[9] जिसमें शृंगार रस का आस्वादन किया जा सकता है। विवाह के अवसर पर इन्दुमती तथा अज का प्रथम समागम इस श्लोक में दिखाते हुए कहा है कि अज का

प्रकोष्ठ रोमांचित हो गया एवं इन्दुमती की अँगुलियाँ स्वेद युक्त हो गयीं।[10] कवि श्रृंगारिक उद्दीपन के लिए काव्यों में वसन्तादि ऋतुओं का वर्णन करते हैं। महाकवि कालिदास ने राजा दशरथ के प्रसंग में वसन्त का वर्णन करते हुए कहा है कि प्रियाओं के कर्णाभूषण स्वरूप नवपल्लव भी कामोद्दीपक हुआ।

कुसुमेव न केवल मार्तवं नवमशोकतरोः स्मरदीपनम्।
किसलयप्रसवोऽपि विलासिनां मदयिता दयिताश्रवणार्पितः।।[11]

वसन्त ऋतु में कवि ने प्रमदाओं के मद्य–पान का वर्णन किया है[12] जो श्रृंगार रस का एक अंग है। वसन्तऋतु में प्रियतम के साथ प्रिया ने झूले पर झूलते हुए रस्सी के पकड़ने में शिथिलता की जिससे प्रियतम के द्वारा पकड़ी जाने पर आलिंगन का सुख प्राप्त कर सके –

अनुभवन्नवदोलमृतूत्सवं पटुरपि प्रियकण्ठजिघृक्षया।
अनयदासनरज्जुपरिग्रहे भुजलतां जलतामबलाजनः।।[13]

मधुमास काल में कोयलों के कामोद्दीपक वचनों को सुनकर मानिनी रमणियां प्रियतमों के साथ रमण करने लगीं क्योंकि कोयलों ने उनसे मानो यह कहा कि मान छोड़ दो, विग्रह करना व्यर्थ है और यह युवावस्था पुनः नहीं आयेगी। राम विषयक सम्भोग श्रृंगार अत्यल्प तथा सुमर्यादित है।[14] कालिदास ने सदैव ध्यान रखा है कि राजा के लिए कैसा श्रृंगार वर्णन समीचीन होगा। महाकवि कालिदास ने राजा कुश के साथ उनकी प्रियाओं का जल–विहार वर्णन बड़ी तल्लीनता से किया है–

वर्णोदकैः कांचनश्रृंगमुक्तैस्तमायताक्ष्यः प्रणयादसिंचन्।
तथागतः सोऽतितरां बभासे सधातुनिष्यन्द इवाद्रिराजः।।[15]

इस प्रकार कुश विषयक सम्भोग श्रृंगार का वर्णन रघुवंश में अत्युत्कृष्ट रूपेण किया गया है, जो विशेषतः जल केलि के रूप में प्रस्फुटित हुआ है।

रघुवंश महाकाव्य का अन्तिम राजा अग्निवर्ण है जो अत्यधिक विलासी था। कविकुलगुरु कालिदास ने अग्निवर्ण राजा के श्रृंगार का कई श्लोकों में वर्णन किया है। तीव्र कामदेव वाले अग्निवर्ण ने युवावस्था से

उन्नत रमणियों के स्तनों के आघात से चंचल कमलों वाली दीर्घिकाओं के जल से गूढ़ सुरत गृहों वाली दीर्घिकाओं को विलोडित किया।[16] इसी प्रकार अग्निवर्ण के साथ अंगनाओं ने मद्यपान, संगीत गोष्ठी और नृत्य–वाद्य का आनन्द लिया।[17] अग्निवर्ण इतना विलासी था कि अपनी प्रियाओं के अतिरिक्त अन्यत्र जाकर वह रमण करता था। इस सन्दर्भ में कवि ने सम्भोग श्रृंगार तथा खण्डिता नायिकाओं के व्यापार का वर्णन किया है –

अंगुलीकिसलयाग्रतर्जनं भ्रूविभंगकुटिलं च वीक्षितम्।
मेखलाभिरसकृच्च बन्धनं वंचयन्प्रणयिनीरवाप सः।।[18]

मानिनी स्त्रियों को वर्षाकाल में अग्निवर्ण ने मनाया ही नहीं क्योंकि ज्यों ही बादल गरजने लगे, रमणियाँ प्रणय–कलह को छोड़कर स्वयं ही अग्निवर्ण के हृदय में प्रविष्ट हो गयीं अर्थात् आलिंगन का सुख प्रदान करने लगीं।[19] इसी प्रकार प्रत्येक ऋतुओं में रमणियों ने अग्निवर्ण को आनन्दित किया। कालिदास ने प्रत्येक ऋतु के विषय में प्रायः एक–एक श्लोक लिखा है। वसन्तऋतु में अग्निवर्ण अपनी रमणियों को गोद में बिठाकर झूलने लगा। और रस्सी छोड़कर गिरने का बहाना करके प्रियाओं की भुजाओं से गाढ़ आलिंगन को प्राप्त किया–

ताः स्वमंकमधिरोप्य दोलया प्रेंख्यन्परिजनापविद्धया।
मुक्तरज्जु निविडं भयच्छलात्कण्ठबन्धनमवाप बाहुभिः।।[20]

रघुवंश में प्रयुक्त कालिदास का मर्यादित सम्भोग श्रृंगार का वर्णन पूर्ण रसास्वादन कराने में समर्थ है। श्रृंगार का उत्तेजक वर्णन कवि की मर्यादा को नष्ट करता हुआ विद्वज्जनों में अशोभनीय होता है। श्रृंगार का अश्लील वर्णन ग्राम्य है और वह काव्यादि में किसी प्रकार औचित्य को ग्रहण नहीं करता। अनौचित्य दोष रसभंग का कारण होता है। अतः कवि ने यथा सम्भव उक्त दोष के निराकरण का प्रस्तुत महाकाव्य में ध्यान रखा है।

अमर्यादित सम्भोग श्रृंगार

महाकवि कालिदास ने रघुवंश में अमर्यादित सम्भोग श्रृंगार का प्रयोग नही ंके बराबर किया है तथापि श्रृंगार रस से सम्पृक्त कवि की वाणी

से निःसृत ध्वनि कहीं अमर्यादित श्रृंगार का वातावरण उपस्थित कर देती है। रमणियों के सम्भोग में स्तन, नितम्बों का अश्लील वर्णन सीत्कार का कथन, नग्न चित्रण और सम्भ्रान्त युवती का श्रृंगारिक वर्णन अमर्यादित श्रृंगार की कोटि में आता है। कवि ने रघुवंश का प्रारम्भ दिलीप राजा के प्रसंग से किया है और दिलीप में नाना प्रकार के उदात्त गुण दिखलाये हैं। कहीं भी कवि ने इन्हें श्रृंगार में विशिष्ट नहीं किया है तथापि उनकी पत्नी सुदक्षिणा के स्तनों का चित्रण करके कवि ने पात्रानुचित अमर्यादित श्रृंगार का दर्शन कराया है। कवि का कथन है कि अत्यन्त पीत तथा सर्वतः नील वर्ण मुख वाली सुदक्षिणा के दोनों स्तनों ने भ्रमरों से युक्त सुन्दर कमल की दो कलिकाओं के सौन्दर्य को अपनी छबि से निम्नतर बना दिया।[21] इसी प्रकार इन्दुमती के स्वयंवर में कोई राजा इन्दुमती को देखकर रमणियों के विलास हेतु दन्तपत्र वाले तथा श्वेत वर्ण केतकी के पुष्प के पत्र को प्रिया के नितम्ब पर रखने हेतु उसे नखाग्रों से खुरचता था।[22] यहाँ पर राजा का अभिप्राय यह है कि सम्भोग काल में मैं तुम्हारे नितम्बों का बिलेखन इसी प्रकार से करूँगा, किन्तु इन्दुमती ने राजा के गले में इसलिए जयमाला नहीं डाली कि यह राजा तृणच्छेदन रूप अशुभ प्रकृति वाला है। यहाँ सम्भोग काल में प्रिया के नितम्बों का बिलेखन अश्लील है। इसी प्रसंग में कोई राजा कमल के समान रक्त वाले तथा ध्वज के चिह्न से युक्त रेखा वाले हाथ से रत्नजटित अँगूठी की कान्ति से युक्त पाशे को उछाल रहा था।[23] यहाँ इन्दुमती को देखकर ऐसा व्यवहार अश्लीलता को अभिव्यक्त करता है, क्योंकि ध्वज शब्द का प्रयोग पुरुषेन्द्रिय का वाचक हो सकता है। काव्य में नखक्षत और दन्तक्षत का वर्णन घोर श्रृंगार की कोटि में आता है। रघुवंश के नवम सर्ग में वह नखक्षत का वर्णन किया है।[24] इसी सन्दर्भ में वह दन्तक्षत का वर्णन करते हैं–

व्रणगुरुप्रमदाधरदुःसहं जघननिर्विषयीकृतमेखलम्।
न खलु तावदशेषमपोहितुं रविरलं विरलं कृतवान् हिमम्।।[25]

कवि ने राजा कुश के प्रसंग में कामिनियों के नखक्षत का वर्णन

करते हुए लिखा है कि स्वेद से युक्त आर्द्र नखक्षत से चिह्नित कामिनियों के कपोल में पराग युक्त शिरीष पुष्प का वर्णन कर्णच्युत होते हुए भी अचानक नहीं गिरा।[26] यद्यपि नखक्षत का वर्णन यहाँ अश्लीलता की कोटि में नहीं आता है, तथापि नखक्षत शब्द से घोर शृंगार की अश्लीलता की ध्वनि निकलती है, जो कालिदास जैसे कवि के लिए कदाचित उचित नहीं है।

यद्यपि अमर्यादित श्रृंगार कालिदास के प्रिय नहीं रहा होगा परन्तु प्रसंगवश एक–दो स्थलों पर स्वयं वर्णन में प्राप्त हो गया है। ये वर्णन भी कोई ऐसे नहीं हैं जो पूर्णतया निषिद्ध हों फिर भी मर्यादित कवि के लिए औचित्य का साधन नहीं हो सकते।

विप्रलम्भ शृंगार

कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में विप्रलम्भ श्रृंगार रस का अत्यल्प प्रयोग किया है। इन्दुमती की मृत्यु होने पर राजा अज विलाप करते हैं। यद्यपि यह अज का विलाप करुण रस की निष्पत्ति करता है तथापि आलम्बन प्रिया के मृत होने पर कुछ आचार्य इसे करुण विप्रलम्भ की संज्ञा देते हैं किन्तु करुण विप्रलम्भ की स्थिति तब पूर्ण होती है जब पुनर्मिलन की सम्भावना रहती है। अज की पत्नी इन्दुमती के मृत होने के बाद पुनः उन दोनों का मिलन नहीं हो पाता, अतः यहाँ करुण विप्रलम्भ की स्थिति नही ं केवल करुण रस का आस्वादन किया जा सकता है। रघुवंश का अष्टम सर्ग करुण रस से पल्लवित हुआ है। यह बात अवश्य है कि अज के विलाप में दाम्पत्य–जीवन का सुमधुर चित्रण करुण से सम्पृक्त होता हुआ भवभूति को भी पराजित कर देता है।[27] राम के सन्दर्भ में कालिदास का कथन है कि जब हनुमान् चूड़ामणि लेकर लंका से लौटे तो राम ने चूड़ामणि को हृदय पर रखकर आँखें मूँदकर मानो स्तन के स्पर्श से रहित प्रिया सीता के आलिंगन का सुख प्राप्त किया।[28] सीता के वृत्तान्त को सुनकर उनसे मिलने के लिए उत्सुक राम ने लंका के समुद्र घेरे को खाईं के समान लघु समझा–

श्रुत्वा रामः प्रियोदन्तं मेने तत्संगमोत्सुकः।
महार्णवपरिक्षेपं लंकायाः परिखालघुम्।।[29]

यहाँ सीता आलम्बन विभाव तथा चूड़ामणि का दर्शन, स्पर्श और प्रिया की वार्त्ता का श्रवण उद्दीपन विभाव है, मणि को हृदय से लगाना आदि अनुभाव तथा उत्सुकता आदि संचारी भाव हैं। पुष्ट होकर यहाँ रति स्थायी भाव से विप्रलम्भ शृंगार रस निष्पन्न होता है।

सीता को जब वन में निर्वासित कर दिया जाता है तो वह राम के वियोग में यह कहती हैं कि तुम्हारे अत्यन्त वियोग के कारण निष्फल इस अभागे जीवन को त्याग ही देती, यदि गर्भ में तुम्हारा तेज मेरा बाधक न होता–

किं वा तवात्यनत वियोगमोघे कुर्यामुपेक्षां हतजीवितेऽस्मिन्।
सयाद्रक्षणीयं यदि मे न तेजस्त्वदीयमन्तर्गतमन्तरायः।।[30]

राजा अग्निवर्ण की प्रियतमाएं उसके विरह में कितना पीड़ित हो जाती थीं, अधोलिखित श्लोक में वियोग की मरणावस्था का चित्रण कितना मनोरम है–

तेन दूतिविदितं निषेदुषा पृष्ठतः सुरतवाररात्रिषु।
शुश्रुवे प्रियजनस्य कातरं विप्रलम्भपरिशंकिनो वचः।।[31]

सुरत दिन की रात्रियों में प्रिया के पीछे बैठे हुए, दूती द्वारा जाने जाते हुए अग्निवर्ण ने अपनी प्रिया के वियोग की शंका करने वाले कातर वचनों को सुना। यहाँ कातर वचनों से अभिप्राय यह है कि उस प्रिया ने दूती से कहा कि बिना अग्निवर्ण के मैं जीवित नहीं रहूँगी। यहाँ पर समागम होते हुए भी विप्रलम्भ शृंगार ध्वनित होता है।

सन्दर्भ –

1. ध्वन्यालोक प्रथमोद्योत, कारिका 6 की वृत्ति, पृष्ठ 34
2. साहित्यदर्पण 3 / 183
3. सुखप्रायेष्टसम्पन्न् ऋतुमाल्यादिसेवकः।
   पुरुषः प्रमदायुक्तः श्रृग्ड़र इति संजितः।। (नाट्यशास्त्र 6 / 47)
4. काव्य प्रकाश – चतुर्थोल्लास, पृ0 154
5. रघुवंश 3 / 3 इसके अतिरिक्त 6 / 13, 6 / 14, 6 / 15, 6 / 19 आदि।
6. काव्यप्रकाश 4 / 36

7. रघुवंश 6/48
8. वही 6/81, 6/82
9. वही 7/6–12
10. वही 7/22
11. वही 9/28
12. वही 9/36
13. वही 9/46–47
14. वही 12/21, 14/27
15. वही 16/70
16. वही 19/9
17. वही 19/12–15
18. वही 19/17
19. वही 19/38
20. वही 19/44
21. वही 3/8
22. वही 6/17
23. वही 6/18
24. वही 9/31
25. वही 9/32
26. वही 16/48
27. वही 8/67
28. वही 12/65
29. वही 12/66
30. वही 14/65
31. वही 19/18